The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 4 | Issue 1 | January 2026
ISSN: 2583-973X (Online), SJIF IF: 5.6
Website: www.theacademic.in

दलित समाज में आंबेडकर का सूट-बूट : प्रतीक, अर्थ एवं सामाजिक अंतर्क्रिया

शशिकान्त भारती

पी.एचडी. शोधार्थी, दलित एवं जनजातीय अध्ययन केंद्र, संस्कृति विद्यापीठ, म.गाँ.अ.हि. वि., वर्धा, महाराष्ट्र

skbsocio@gmail.com

DOI : https://doi.org/10.5281/zenodo.18648291

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Accepted: 26-01-2026

Published: 10-02-2026

Keywords:

दलित समाज, आंबेडकर, सूट-बूट, प्रतीकात्मक संचार, प्रतीकात्मक अंतर्क्रिया, सामाजिक अर्थ.

ABSTRACT

यह शोधपत्र डॉ. आंबेडकर के सूट-बूट को दलित समाज में प्रतीकात्मक संचार की एक सशक्त सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के रूप में विश्लेषित करता है। प्रायः आंबेडकर पर केंद्रित अध्ययनों में उनके विचार, राजनीति और संवैधानिक योगदान पर विस्तार से चर्चा की जाती है, जबकि उनके पहनावे को एक गौण व्यक्तिगत तथ्य मान लिया जाता है। इसके विपरीत यह अध्ययन यह तर्क प्रस्तुत करता है कि आंबेडकर का सूट-बूट दलित समाज की ऐतिहासिक सामाजिक यात्रा बहिष्करण, अपमान और अदृश्यता से गरिमा, दृश्यता और आधुनिक नागरिकता की ओर का एक गहन प्रतीकात्मक रूप है। प्रतीकात्मक अंतर्क्रियावादी परिप्रेक्ष्य के आलोक में यह शोधपत्र यह आग्रह प्रस्तुत करता है कि वस्त्र सामाजिक अंतर्क्रियाओं में किस प्रकार अर्थ ग्रहण करते हैं। इन अर्थों का पुनर्पाठ व पुनर्निर्माण कैसे होता है। तथा वे वस्त्र दलित 'स्व', सामूहिक पहचान और सांस्कृतिक दावेदारी के निर्माण में किस प्रकार केंद्रीय भूमिका निभाते हैं।

प्रस्तावना

भारतीय समाज में वस्त्र सामाजिक पदानुक्रम, सांस्कृतिक सीमाओं और सत्ता-संबंधों के दृश्य संकेतक रहे हैं। जाति-आधारित सामाजिक संरचना में लंबे समय तक यह तय किया जाता रहा है कि कौन किस प्रकार के वस्त्र पहन सकता है और कौन नहीं। दलित समाज के संदर्भ में वस्त्र ऐतिहासिक रूप से नियंत्रण, अपमान और बहिष्करण के उपकरण के रूप में प्रयोग हुए

हैं। उदाहरण के लिए कमर में झाड़ू बाँधने की प्रथा, सिर झुकाकर चलने की बाध्यता, तथा उचित वस्त्र न पहन सकने के आरोपण को दलितों ने झेला। ये सभी नियम मात्र नहीं थे बल्कि दलित शरीर को सामाजिक रूप से हीन सिद्ध करने की प्रतीकात्मक रणनीतियाँ थीं।

इसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में डॉ. आंबेडकर जिन्हें उनके चाहने वाले 'बाबासाहेब' कहकर संबोधित करते हैं, उनके द्वारा सूट-बूट का पहना जाना मात्र एक व्यक्तिगत चुनाव भर नहीं है बल्कि एक गहन सामाजिक हस्तक्षेप के रूप में सामने आता है। उनका यह पहनावा उस प्रतीकात्मक व्यवस्था को चुनौती देता है जिसमें दलित शरीर को आधुनिकता, शिक्षा और सत्ता के प्रतीकों से व्यवस्थित रूप से कठोरता से वंचित रखा गया था। आंबेडकर का सूट-बूट दलित समाज के भीतर और बाहर एक मौन किंतु प्रभावशाली प्रश्न खड़ा करता है कि क्या दलित आधुनिक, तर्कशील और अधिकार-संपन्न नागरिक नहीं हो सकते?

यह शोधपत्र इसी प्रश्न को केंद्र में रखता है। जिसका उद्देश्य यह समझना है कि आंबेडकर का सूट-बूट सामाजिक अंतर्क्रियाओं में किस प्रकार अर्थ ग्रहण करता है तथा यह दलित समाज में साझा अर्थों के निर्माण में किस प्रकार सहायक बनता है। इस विश्लेषण में प्रतीकात्मक अंतर्क्रियावादी दृष्टिकोण सैद्धांतिक स्पष्टता प्रदान करता है। क्योंकि यह सामाजिक जीवन को अर्थों, प्रतीकों और अंतर्क्रियाओं की प्रक्रिया के रूप में समझने की सुविधा देता है।

प्रतीकात्मक अंतर्क्रियावाद

प्रतीकात्मक अंतर्क्रियावाद समाज की व्याख्या निरंतर घटित होने वाली मानवीय अंतर्क्रियाओं की प्रक्रिया के रूप में करता है। इस दृष्टिकोण के अनुसार मनुष्य वस्तुओं, व्यक्तियों और प्रतीकों के प्रति उसी अर्थ के आधार पर व्यवहार करता है जो वह उन्हें स्वयं प्रदान करता है। ये अर्थ सामाजिक संपर्कों के दौरान निर्मित होते हैं और व्याख्यात्मक प्रक्रियाओं के माध्यम से निरंतर संशोधित होते रहते हैं।

इस परिप्रेक्ष्य में 'अर्थ' मानव व्यवहार का केंद्रीय तत्व माना जाता है। भाषा व प्रतीक इन अर्थों को व्यक्त करने और साझा करने के माध्यम हैं। जबकि चिंतन व्यक्ति को इन प्रतीकों की व्याख्या करने और उन्हें नए संदर्भों में पुनर्स्थापित करने की क्षमता देता है। समाज इस अर्थ में मानवीय अनुभवों और व्याख्याओं का संचयी परिणाम है। जहाँ सामाजिक वास्तविकता तब तक अस्तित्व में रहती है जब तक कि वह मानवीय अंतर्क्रियाओं में अर्थपूर्ण बनी रहती है।

इस सैद्धांतिक ढाँचे अलोक में यह कहा जा सकता है कि वस्त्र भी एक अत्यंत प्रभावशाली प्रतीक हैं। वे केवल सामाजिक स्थिति का ही संकेत नही देते हैं बल्कि वे यह भी प्रकट करते हैं कि व्यक्ति स्वयं को कैसे देखता है और वह समाज से कैसी प्रतिक्रिया की अपेक्षा करता है। वस्त्रों के माध्यम से व्यक्ति सामाजिक जगत से संवाद करता है तथा अपनी पहचान का सार्वजनिक प्रस्तुतीकरण करता है। दलित समाज के लिए एक तरफ जहाँ वस्त्र ऐतिहासिक रूप से अपमान और नियंत्रण के प्रतीक रहे हैं वहीं वस्त्रों का पुनःअर्थकरण सामाजिक परिवर्तन की एक निर्णायक एवं सशक्त सांस्कृतिक प्रक्रिया बन जाता है।

दलितों की ऐतिहासिक यात्रा

दलित समाज की ऐतिहासिक यात्रा को संज्ञान में लिए बिना आंबेडकर के सूट-बूट के प्रतीकात्मक महत्व को समग्रता में समझने का प्रयास जल्दबाजी होगी। आज भारयीय समाज के इतिहास के संबंध में लिखे जा रहे तमाम पन्ने एक बात निर्विवाद रूप से सहमत हैं कि परंपरागत भारतीय समाज में दलितों को आर्थिक और राजनीतिक संसाधनों से वंचित रखा गया। इतना ही नहीं, उनके शरीर, आवास, भोजन एवं वस्त्रों तक को सामाजिक नियंत्रण के अधीन रखा गया। दलितों को ऐसे वस्त्र पहनने के लिए बाध्य किया गया जो उनकी कथित 'निम्न' सामाजिक स्थिति को सार्वजनिक रूप से प्रदर्शित करे।

दूसरों के द्वारा दलितों पर कमर में झाड़ू बाँधने जैसी प्रथाएँ थोपना दलित शरीर को अपवित्र और अमानवीय ठहराने की स्पष्ट रणनीतियाँ थीं। ऐसा कहा जाए तो बेमानी नहीं होगी। इतिहास में घटित हुईं इस तरह की घटनाएं एक प्रकार से प्रतीकात्मक आरोपण ही थीं। इस प्रकार के प्रतीकों के माध्यम से दलितों को सामाजिक रूप से अदृश्य बनाए रखने का प्रयास किया गया। वस्त्र और उनसे जुड़े संकेत दलितों से सामाजिक दूरी बनाए रखने और जाति-आधारित विभाजन को स्थायी बनाने के उपकरण बने रहे।

औपनिवेशिक काल में आधुनिक शिक्षा, शहरीकरण और नए पेशागत अवसरों के विस्तार के साथ दलित समाज में परिवर्तन की संभावनाएँ उभरने लगीं। यह परिवर्तन केवल भौतिक परिस्थितियों तक सीमित नहीं रहा बल्कि सांस्कृतिक और प्रतीकात्मक स्तर पर भी घटित हुआ। वस्त्रों के माध्यम से सामाजिक पहचान को पुनर्परिभाषित करने की आकांक्षा इसी ऐतिहासिक संक्रमण का परिणाम मालूम पड़ती है। डॉ. आंबेडकर इस संक्रमण के समान्य प्रतिनिधि की जगह उसके सक्रिय प्रवर्तक के रूप में उभरकर सामने आते हैं।

आंबेडकर का सूट-बूट

औपनिवेशिक समाज में आंबेडकर का सूट-बूट पहनना एक सचेत सांस्कृतिक प्रस्तुति कहा जा सकता है। जहाँ उनकी यह सांस्कृतिक प्रस्तुति कानून, शिक्षा, तर्कशीलता और आधुनिक राज्य की संस्थाओं से गहराई से जुड़ी हुई थी। उस ऐतिहासिक संदर्भ में सूट-बूट सार्वजनिक क्षेत्र का एक ऐसा मान्य वस्त्र था जिसके माध्यम से व्यक्ति अदालत, संसद और विश्वविद्यालय जैसे स्थलों में वैधता व अधिकार की भाषा व्यक्त करते हुए प्रवेश कर सकता था।

ऐसे समाज में जहाँ दलितों को इन संस्थानों से नियोजित रूप से बाहर रखा गया था वहाँ आंबेडकर का सूट-बूट पहनकर सार्वजनिक मंचों पर उपस्थित होना एक प्रतीकात्मक पुनर्परिभाषा बन जाता है। उनका यह पहनावा प्रभुत्वशाली समाज के लिए चुनौती को प्रतिबिंबित करता है। इसके साथ-साथ उनका यह पहनावा स्वयं दलित समाज के लिए भी एक नया, आधुनिक, एवं सशक्त दर्पण प्रस्तुत करता है। आंबेडकर की तस्वीरों, उनके सूट-बूट में बने कैलेंडरों, विवाह-निमंत्रण पत्रों पर उनकी छवियों, छोटे पुतलों, बुद्ध विहारों में स्थापित प्रतिमाओं तथा राजनीतिक और सरकारी स्मारकों में उनकी प्रस्तुति, ये सभी उस प्रतीकात्मक प्रक्रिया के उदाहरण हैं। जिसमें सूट-बूट दलित पहचान के नए अर्थ की रचना करता है।

इन दृश्य प्रतीकों के माध्यम से आंबेडकर का सूट-बूट व्यक्तिगत पहनावे से आगे बढ़कर एक सामूहिक सांस्कृतिक संकेत के रूप में स्थापित हो जाता है। यह संकेत दलित समाज को यह दिखाता है कि आधुनिकता, सत्ता और सार्वजनिक सम्मान उनके लिए भी सुलभ एवं महत्वपूर्ण हैं। इस प्रकार सूट-बूट एक ऐसी प्रतीकात्मक भाषा में रूपांतरित हो जाता है जिसके माध्यम से दलित समाज अपने ऐतिहासिक अपमान को चुनौती देता है और नई सामाजिक पहचान का दावा करता है।

प्रतीकात्मक संचार, अंतर्क्रिया तथा अर्थ-निर्माण

प्रतीक तभी सामाजिक रूप से प्रभावी बनते हैं जब वे सामाजिक अंतर्क्रियाओं में सक्रिय रूप से प्रयोग में लिए जाते हैं। आंबेडकर का सूट-बूट भी अपनी प्रतीकात्मक शक्ति इसी प्रक्रिया के माध्यम से प्राप्त करता है। जब यह पहनावा देखा जाता है तो उस पर प्रतिक्रियायें होती हैं। जिसकी अनेक सामाजिक संदर्भों में व्याख्याएँ की जाती हैं। इस प्रक्रिया में यह पहनावा अर्थपूर्ण बन जाता है।

दलित समाज में आंबेडकर की सूट-बूट में प्रस्तुत छवियों की पुनरावृत्ति, चाहे वह सार्वजनिक समारोह हों, शैक्षणिक संस्थान हों या घरेलू सांस्कृतिक स्थल, यह इस बात का संकेत है कि यह पहनावा एक सामूहिक प्रतीक बन चुका है। दलितों द्वारा

सूट-बूट का अपनाये जाने को केवल एक फैशन कहकर इसे सामान्यीकृत करना त्रुटिपूर्ण होगा। यह उनकी आत्म-छवि, सामाजिक आकांक्षा और सामूहिक स्मृति के पुनर्निर्माण की प्रक्रिया है।

इस प्रतीक के माध्यम से दलित समाज स्वयं को नए अर्थों में देखने लगा है। ऐसा करते हुए वह अन्य से प्राप्त प्रतिक्रियाओं को भी पुनर्संरचित कर रहा है। अब दलितों के बीच सूट-बूट एक ऐसा माध्यम बन गया है जिसके द्वारा वह आधुनिक एवं संवैधानिक नागरिकता, सम्मान और वैधता की भाषा में संवाद करता है।

प्रोफेसर कारुण्यकारा का हस्तक्षेप

प्रोफेसर डॉ. लेल्ला कारुण्यकारा का चिंतन इस शोधपत्र के वैचारिक प्रेरणा-स्रोतों में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। वे आंबेडकर के सूट-बूट को केवल व्यक्तिगत पसंद या औपनिवेशिक आधुनिकता की नकल के रूप में नहीं बल्कि एक सुसंगत सांस्कृतिक वक्तव्य के रूप में देखते हैं। उनके अनुसार, आंबेडकर का सूट-बूट उस व्यापक सांस्कृतिक संरचना का हिस्सा है जिसके माध्यम से दलित समाज आधुनिकता, सम्मान और वैश्विक नागरिकता की भाषा में स्वयं को अभिव्यक्त करता है।

कारुण्यकारा का यह हस्तक्षेप इस वजह से अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है कि यह इस बात की ओर संकेत करता है कि प्रतीक केवल व्यक्तिगत स्तर पर अर्थ नहीं रखते हैं बल्कि वे सामूहिक अनुकरण, सामाजिक अपेक्षाओं और संवाद की प्रक्रियाओं में संस्थागत रूप ग्रहण करते हैं। कारुण्यकारा इस बात पर जोर देते हैं कि आंबेडकर का सूट-बूट 'दलित ड्रेस कल्चर' का निर्माण करता है। दलितों के बीच यह एक ऐसी सांस्कृतिक परंपरा है जो दलित समाज को आत्म-प्रस्तुति के नए मानक प्रदान करती है।

उनके चिंतन में यह स्पष्ट रूप से उभरता है कि आंबेडकर की सफलता उनके बौद्धिक और राजनीतिक कौशल का परिणाम तो थी, साथ ही यह उस सांस्कृतिक पूंजी का भी परिणाम थी जिसे वे अपने पहनावे के माध्यम से निर्मित करते हैं। जहाँ सूट-बूट, अंग्रेज़ी भाषा, औपचारिक अभिवादन और सार्वजनिक व्यवहार के तत्व मिलकर एक ऐसे सांस्कृतिक ढाँचे का निर्माण करते हैं जिसके भीतर दलित समाज स्वयं को आधुनिक सत्ता-संरचनाओं के अनुरूप प्रस्तुत करता है।

आंबेडकर का सूट-बूट अतीत का प्रतीक होने की बजाय दलित समाज का एक सक्रिय सांस्कृतिक संसाधन है। कारुण्यकारा का हस्तक्षेप इस बात को रेखांकित करता है कि दलित समाज में सूट-बूट का प्रसार एक सचेत प्रतीकात्मक रणनीति है जिसके माध्यम से उनमें सामाजिक दृश्यता, गरिमा और 'ब्रांड इमेज' का निर्माण हुआ है। कारुण्यकारा के विश्लेषण का

अध्ययन करने से इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि आंबेडकर का सूट-बूट दलित समाज में एक जीवंत सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में स्थापित है। यह एक ऐसा प्रतीक है जो दलित समाज के भीतर अर्थ-निर्माण की प्रक्रिया को दिशा देता है और प्रतीकात्मक अंतर्क्रियाओं के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन की संभावनाओं को विस्तार देता है।

निष्कर्ष

दलित समाज को केवल 'निम्न आर्थिक-सामाजिक स्थिति' मात्र के रूप में समझना एक अपूर्ण अध्ययन है। प्रतीकात्मक अंतर्क्रियावादी दृष्टि हमें आवश्यक रूप से यह दिखाती है कि दलित समाज आत्म-छवि, गरिमा व सामाजिक दृश्यता के नए अर्थ निर्मित कर रहा है। वह लगातार उन प्रतीकों पर कार्य कर रहा है जिनके माध्यम से सामाजिक पहचान निर्मित होती है। यहाँ आंबेडकर का सूट-बूट दलित प्रतीकात्मक संचार की एक सशक्त सांस्कृतिक अभिव्यक्ति है जो उसकी आधुनिक नागरिकता, सांस्कृतिक स्वायत्तता की आकांक्षाओं एवं रणनीतियों को अभिव्यक्त करता है।

आंबेडकर के सूट-बूट की सामाजिक-ऐतिहासिक अवधारणा का श्रेय प्रोफेसर कारुण्यकरा को जाता है जिसे वे 'दलित ड्रेस कल्चर' नाम देते है। यह शोधपत्र सार्वजनिक क्षेत्र में उपलब्ध उनके द्वारा प्रतिपादित इसी अवधारणा को समझने का प्रयास है। दलित समाज के संबंध में इस विषय पर अधिक स्पष्टता हेतु उनके द्वारा इसका सुव्यवस्थित रूप से परिभाषित-विश्लेषित प्रकाशन आवश्यक रूप से महत्वपूर्ण ही सिद्ध होगा।

संदर्भ

- Ambedkar, B. R. (2014). *Annihilation of Caste*. New Delhi: Navayana.
- Blumer, H. (1969). *Symbolic Interactionism: Perspective and Method*. Berkeley: University of California Press.
- Dirks, N. B. (2001). *Castes of Mind: Colonialism and the Making of Modern India*. Princeton: Princeton University Press.
- Goffman, E. (1959). *The Presentation of Self in Everyday Life*. New York: Anchor Books.
- Mead, G. H. (1934). *Mind, Self, and Society*. Chicago: University of Chicago Press.

- Singh, J. P. (2010). *Contemporary Sociological Theories*. New Delhi: Rawat Publications.